ग्रामीण पाठकों के लिए

रामजी जाग उठा

दि. बा. मोकाशी

अनुवाद

लीला बांदिवडेकर

चित्र

चैताली चटर्जी

एकः सूते सकलम्

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-3313-5

पहला संस्करण : 2000 (शक 1922)
मूल © बिंबा जोशी, 1997
हिन्दी अनुवाद © नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 1999
Original Title : *Aata Amod Sunasi Aale (Marathi)*
RAMJI JAAG UTHA (Hindi)

रु. 7.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
ए-5, ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

बारिश की बूंदें तड़-तड़ आवाज करती हुई गिर रही हैं। शिवा नेमाणे की गाय बियाने को हुई है। बरसात का पानी पीकर नदी मस्ती में बह रही है। रामजी लुहार के इकलौते बेटे को हहराती धारा बहा ले गयी है। गीले कपड़े की तरह हवा सर्द हो गयी है। गणू शिनारे का दमा बढ़ गया है। क्या कुदरत के कहर बरपा देने पर ऐसी ही घटनाएं घटती हैं? लोग ऐसे सुन्न क्यों हो जाते हैं?

आज छह दिन हो गये। केंबल गांव बारिश की मार खाते-खाते दबक कर बैठा था। इन छह दिनों में आसमान का काला रंग बदला ही नहीं था। पहाड़ से लेकर तलहटी के गांवों तक ग्रहण का-सा भयावह अंधेरा फैला था। पानी के लाल रेले हहराते बह रहे थे। बारिश की झड़ियां छुरी की तरह धरती पर गिर रही थीं। इंजन से निकली भाप की-सी आवाज वातावरण को भर रही थी। घर चू रहे थे। लोगबाग बीड़ियां फूंक रहे थे और चाय पी रहे थे। वे आपस में इस तरह बोल रहे थे कि लगता था धरती की यह रचना उन्हें कभी पसंद ही न आयी हो।

गांव में जो दस-बारह दुकानें थीं वे कब की बंद हो चुकी थीं। संतू वाणी की दुकान की सिर्फ एक तख्ती खुली थी। वहां से पानी की फुहारें अंदर आ रही थीं और लालटेन क़ी रोशनी में गुस्सैल-सी दिख रही थीं। आज बुधवार था। संतू वाणी की कोठी पर हमेशा की तरह आज 'ज्ञानेश्वरी' का पाठ था। गांव में जो चार कंठीधारी थे वे हर बुधवार यहां इकट्ठा होते थे। कोठी छोटी थी। जमीन पर दरी

बिछी थी। कोने में एक चौकी और एक छोटा आसन रखा था। बारी-बारी से वे वहां बैठकर मराठी संतों की कोई न कोई रचना, जैसे- 'ज्ञानेश्वरी', 'अमृतानुभव', 'चांगदेव पासष्टी', 'तुकाराम के अभंग' और ऐसा ही कुछ सामने रखकर प्रवचन करते थे।

संतू वाणी के बरामदे में अब दो कंठीधारी आ चुके थे। जोशी दर्जी अपनी धोती निचोड़ रहा था। गोविंदा सब्जीवाला लालटेन को मंद कर रहा था। स्वयं संतू वाणी तकिये से टेक लगाकर बैठा था। दुकान की सारी चीजों की मिली-जुली तीखी भीगी-सी गंध हवा में गमक गयी थी। तेल से चमकीले बने बेंच, काले पड़े डिब्बे, चाय

के रंगीन खोखे, हींग, जीरा, धनिया के अलग-अलग नाम की पर्चियां चिपकाये डिब्बों के ढेर-सारी दुकान इस बारिश में छाती से घुटने टेककर सोयी थी और एक पलड़े में बाट डला तराजू डेढ़ पैरों पर शांति से खड़ा था। गले की कंठी से खेलते हुए संतू वाणी ने कहा,

''रामजी नहीं आये?''

निचोड़ी हुई धोती का हिस्सा झटक कर जोशी दर्जी बोला, ''हां जी, नहीं आये।''

''आने दो उनको।''

''आने दो, फिर शुरू करेंगे।''

लालटेन को मंद कर गोविंदा सब्जीवाला बेंच पर बैठ गया। तीनों बिना कुछ कहे थोड़ी देर के लिए खड़े रहे। फिर जोशी ने पूछा, ''दरवाजा बंद कर दूं? बौछारें अंदर आ रही हैं।''

''लेकिन रामजी आयेंगे।''

''हां, रामजी आयेंगे।''

तीनों ने रास्ते की ओर ताका। लेकिन रामजी की लालटेन हिलती हुई नजर नहीं आयी। बाहर घना अंधेरा था। केवल रास्ते पर गिरती बारिश की खास आवाज से ही उसकी पहचान हो रही थी। गोविंदा सब्जीवाले ने कहा,

''यह हवा दमे के लिए बहुत खराब है।''

''शिनारे जमीन पर माथा टेककर लेटा होगा। ऐसी ही हवा में वह कभी मर जायेगा।''

''मरेगा काहे को! ऐसे ही लोग बड़े जीवट के होते हैं।''

''हां, हां! वे शरीर छोड़ने को तैयार नहीं होते।''

''बारिश रुकने दो। बीड़ी फूंकते-फूंकते बाहर आ जायेगा

फुरफुर!''

''ऐसे लोगों को मौत नहीं छूती।''

''और हट्टे-कट्टे मरते हैं फटाफट!''

इस बात से सभी को रामजी लुहार के बेटे की याद हो आयी। संतू वाणी ने कहा,

''आज चौथा दिन है बच्चे के बाढ़ में बह जाने का।''

''जवानी में आया बेटा कूच कर गया।''

''रामजी की उमर क्या होगी?''

''होगी साठ के आसपास।''

''वंश ही खत्म हो गया।''

''वैसे लड़का शरारती तो नहीं था। कैसे बह गया होगा बाढ़ में?''

''लड़के मस्ती में जाते हैं।''

''क्या शिवा की गाय बिया गयी?''

''नहीं जी! और तीन दिन लेगी।''

''देखना, आज ही बियायेगी।''

''क्या उसका बेटा माथेरान से आ गया?''

''ऐसी बारिश में क्या आयेगा?''

''वह आयेगा।''

''किसलिए? मरने के लिए? कगार से नीचे गिर जायेगा।''

फिर से किसी को रामजी की याद आयी।

''रामजी नहीं आये?''

''क्या बुलाने जायें?''

''जाइये जोशीजी, आप जाइये। धौंकनी के पास दुखी होकर बैठा होगा वह।''

लालटेन उठाकर जोशी बाहर निकल पड़े।

बारिश रुकने का नाम ही नहीं ले रही थी। शिवा नेमाणे बार-बार टटिया के पास आकर गाय की ओर देख रहा था। गाय जहां खड़ी थी वहां आसपास की जगह में पानी कम चू रहा था। गाय ने बियाने के लिए आज का ही दिन चुना, इस बात पर शिवा को गुस्सा आ रहा था। बीच-बीच में उठकर उसकी औरत गोठ में झांक आती थी। गाय की छटपटाहट को वह ज्यादा पहचानती थी। पीड़ा से गाय का बदन खड़े-खड़े ही टेढ़ा-मेढ़ा हो रहा था। बीच में वह बैठ

जाती, फिर लड़खड़ा कर उठती भी। कभी-कभी गर्दन भी उठाती। सीधी नजर से कहीं एकटक देखती। उसका पीछे का हिस्सा फूलता जा रहा था। आंवल का नीला-काला गोला बाहर आ रहा था। टटिया के कोने में रखी घासलेट की ढिबरी धुआं उगलती हिलती जा रही थी। हवा से उसकी लौ कांपती जा रही थी। और गाय की छटपटाहट बढ़ने लगी थी। शिवा बोला,

''इस साल सुनार का उठौना बंद कर देंगे। साला एक भी पैसा नहीं देता!''

उसकी घरवाली बोली, ''कब से तो मैं कह रही थी! आप सरकारी आदमियों को पकड़ लें।''

''हां, नौकरीपेशा ही अच्छा होता है। एक तारीख को पैसा तो मिल जाता है।''

बीच-बीच में वे ऐसी बातें एक-दूसरे को धीरज बंधाने के लिए कर रहे थे। अंदर से तो डर था कि गाय ठीक से बियायेगी कि नहीं। उसे ठीक से छुटकारा मिलेगा तो अच्छा होगा!

''अर्ज्या माथेरान से आयेगा या नहीं?'' उसकी औरत ने कहा।

''वह आयेगा कैसे? धुआंधार बारिश हो रही है।''

''देखना, जरूर आयेगा।''

''ना आये तो अच्छा! ऐसी बारिश में पहाड़ उतर कर आना ठीक नहीं है। सब जगह फिसलन हो गयी है।''

''फिर रामजी लुहार को बुलायेंगे आप?''

''अरी ओ! उसका तो बेटा चल बसा। उसे कैसे कहेंगे आने के लिए!''

''यह भी सही है।''

इतने में गोठ से गाय के खुरों की खड़खड़ सुनायी पड़ी। दोनों टटिया की ओर दौड़ पड़े।

बेटा के बाढ़ में बहे चार दिन हो गये थे पर रामजी धौंकनी को टेककर जो बैठा था वह अभी तक उठा नहीं था। बीच-बीच में अंदर से उसकी औरत की रोने की आवाज सुनायी दे रही थी। एक ढिबरी कोने में धुआं उगलती हुई लाल रोशनी दे रही थी। शाम के धुंधलके जैसी उदासी घर भर में फैली थी। रामजी के मन में यही एक सवाल घुमड़ रहा था – 'मेरा बेटा क्यों मर गया? विट्ठल जी! तुमने यह क्या किया? क्या मैं बुढ़ापे में नि:संतान होकर रोता रहूं? क्यों? क्यों??'

इसके पहले भी फसलें अच्छी नहीं हुईं, धंधा नहीं चला और चोरियां हो गयीं। पर किसी से भी रामजी का मन नहीं टूटा था। कोई भी अपनी मुसीबतें लेकर रोता हुआ आता तो रामजी उसे ढाड़स देता था। कभी चार अभंग (पद) सुनाकर, तो कभी संतों की रचना के प्रमाण देकर। लोग कहते, रामजी से बात करने पर दुख हलका हो जाता है।

लेकिन आज रामजी का अपना ही दुख किसी भी बात से हलका नहीं हो रहा था। आज तक जो कुछ उसने लोगों से कहा था वह तो ऊपरी सतह का समाधान था। जीना और मरना इनमें से उसने कुछ नहीं जाना था और संतों ने भी नहीं जाना था। इसलिए जो आज तक उसने नहीं किया वह आज कर रहा था। भगवान से सवाल कर रहा था। तीस सालों की अपनी पंढरपुर की की गयी यात्राएं उसने विट्ठल के सामने रखी। कहां गया पुण्य पैदल किये गये इन यात्राओं का? क्या प्रारब्ध से लड़का मरा? कैसा प्रारब्ध? बुढ़ापे में मैं रोऊं यही प्रारब्ध?

जिस भाषा का प्रयोग उसने दूसरों को ढाड़स देने के लिए किया था वह आज उसके लिए बेमानी हो गयी थी। वह विट्ठल से नाराज नहीं हुआ था। उतना आवेश भी उसमें नहीं रहा था। घड़ी बंद हो

जाये और फिर समय भी झूठा लगने लगे, ऐसा कुछ उसे लगने लगा था। अचानक उसके ध्यान में आया कि इतने साल विट्ठल की भक्ति के सहारे वह जी रहा था। जब तक लड़का जीवित था तब तक उसे लगता था कि अपना जीव अलग है, अपने जीने का उद्देश्य अलग है, और लड़के का अलग है। लेकिन लड़का चल बसा तो अपना शरीर भी उसे व्यर्थ लगने लगा। उसकी देह मानो एक थैली थी। उसमें रखी चीज के गिरते ही थैली का क्या किया जाये?

किसी कंठीधारी ने कहा था कि रामजी का दुख अहंकार का ही एक रूप था। लेकिन जिस तरह केंबल गांव बारिश से छुटकारा नहीं पा सकता था उसी तरह रामजी भी इस अहंकार से मुक्त नहीं हो सकता था।

ओसारे का दरवाजा खोलकर जोशी दर्जी कब अंदर आया इसका पता रामजी को नहीं लगा। जोशी ने छाता कोने में रखा। लालटेन मुंडेर पर रखी और बात की शुरुआत कैसे की जाये यह न जानने पर पशोपेश में पड़ा वह थोड़ी देर खड़ा रहा। फिर बोला,

"रामजी, लोग आपकी राह देख रहे हैं।"

रामजी की न निगाहें उठीं न गर्दन हिली।

"रामजी, उठिये। आज बुधवार है...।"

लेकिन अबकी बार पुकार सुनकर भी रामजी का मन नहीं हुआ कि बात करें। अब जोशी आगे बढ़ा। रामजी के पास जाकर उसके कंधे पर उंगली रखकर बोला,

"रामजी, चलिये। ज्ञानेश्वरी का पाठ करने पर अच्छा लगेगा।"

रामजी ने मन ही मन कहा, 'अब मुझे किसी बात से अच्छा नहीं लगेगा – किसी से भी नहीं। सब कुछ झूठ है। यह दुनिया झूठी है। मैं झूठा हूं। ज्ञानेश्वरी और विट्ठल झूठे हैं। हम सब व्यर्थ ही यहां हैं।'

लेकिन किसी से बात करने की या विवाद करने की उसकी इच्छा ही खत्म हो गयी थी। किसी ने कहा, "रामजी, खाना खाने के लिए उठिये।" वह उठा। "कपड़े बदल डालिये।" बदल डाले। चार दिन से ऐसा ही हो रहा था। अबकी बार भी जोशी के "उठिये"

कहते ही वह उठा। मशीन की तरह दरवाजे के पास गया। जोशी ने लालटेन उठायी। बाहर आते ही दरवाजा भेड़ दिया। ओसारे से आगे बढ़कर रामजी सीधे बारिश में ही घुस गया था। जोशी ने झट से छाता खोलकर रामजी के सिर पर तान दिया। रास्ता तय करते समय रामजी की संभाल वह इस प्रकार करने लगा जिस प्रकार किसी बीमार की की जाती है। "रामजी, आगे गड्ढा है, जरा ध्यान से! रामजी, पत्थर है...!" संतू वाणी के ओसारे में घुसकर झुके छत के पास आते ही उसने कहा, "नीचे झुक जाइये, रामजी...!"

संतू वाणी की दुकान में आकर रामजी ने इधर-उधर देखा ही नहीं। नजर सीधी रखकर वह सीधे अंदर गया और सीढ़ी चढ़कर कोठी पर आ गया। सामने वाली जगह पर ही बैठा और आलथी-पालथी लगाकर भावशून्य चेहरे से वह देखता रहा। अन्य तीन कंठीधारी अपनी-अपनी जगह पर बैठ गये। सीधी निगाह से रामजी की तरफ देखने का साहस कोई नहीं कर रहा था। रामजी के बेटे का मर जाना मानो उन्हीं का गुनाह था।

पोथी के सामने संतू वाणी बैठा था। वहां बैठने का आज उसका मन नहीं था। इससे वह बेचैन दिख रहा था। एक बार उसने अपनी निगाह तीनों पाठकों की ओर घुमायी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आज क्या पढ़ा जाय। उसने पोथी को नमस्कार किया। औरों ने भी किया। केवल रामजी ही जांघ पर हाथ रखकर बैठा था। संतू के मन में आया कि आज जोशी या गोविंदा के बैठने में कुछ हर्ज तो नहीं था। मैं क्या कहूं आज?

उसने फिर से रामजी की ओर देखा। उसके मन में आया, 'दुख से इंसान इतना सुन्न हो जाता है। रामजी मेरा आत्मीय है, लेकिन यह आश्चर्य है कि उसका दुख मुझे छूता भी नहीं है! मैं तड़पा, लेकिन

भीतर का सुखी और निश्चिंत मन हिला तक नहीं। अपना सब कुछ ठीकठाक होने का भाव और उसकी गर्माहट कभी टूटी नहीं।

'ऐसी ही है भगवान की करतूत। वह एक-एक को पकड़ कर मारता है। एक-एक को जन्म देता है। उसकी तरकीब है कि एक साथ मिलकर इंसान उसके विरोध में न आ जाये। शायद ही एक मनुष्य दूसरे के लिए संपूर्णतः दुखी होता है।

'लेकिन आज क्या पढ़ा जाये?'

जोशी ने रामजी की ओर देखा। रामजी उसे ऐसे दिखायी पड़ा जैसे कभी पानी से टपकता, हवा से फरफराता और धूप से चमकता पत्ता नीचे गिरा हो और बेजान बना हो। क्या यही वह रामजी है जो गाड़ी की धुरा को भट्ठी में लाल होने तक तपाकर हथौड़े से दनादन ठोंकता था? क्या यही है वह जो पसीना टपकते समय हंसते-हंसते विनोद कर बच्चों को हंसाता था? क्या यही है वह रामजी जो कि जब जानवर बीमार होते, या भैंस को बियाने में तकलीफ होती तो दौड़ पड़ता? मृत्यु के धक्के से इतना डरा हुआ आदमी पहली बार मैंने देखा। मेरे मामा की तीन पत्नियां चल बसीं और उन्होंने चार शादियां रचायीं। लेकिन ऐसी उदासीनता मामा में कभी नहीं दिखी। मनुष्य मृत्यु को भूलता है। रामजी भी भूलेगा। भगवान की यह कितनी बड़ी कृपा है कि उसने मनुष्य को मृत्यु के संदर्भ में भी भुलक्कड़ बनाया! नहीं तो बचपन में टूटी गुड़िया का दुख भी मरने तक मनुष्य को नहीं छोड़ता।

शिवा के टटिया के पास और घर में पानी चू रहा था। टपकते पानी को रोकने की शिवा की औरत की कोशिश जारी थी। इस चूते हुए टूटे घर के कारण सभी मौसमों में उन्हें दौड़धूप करनी पड़ती।

सर्दी में ठंडी हवा अंदर घुसती और ओढ़ने की कमी महसूस होती। गर्मी में पूरा घर तपता था और चारों ओर से धूल ही धूल अंदर आ जाती। शिवा को जब से याद है तब से ऐसा ही है सब। खेती के अलावा कुछ दूसरा अपना धंधा भी हो, इसलिए तो कर्ज लेकर यह गाय खरीदी थी। कुछ दिनों बाद भैंस भी लेने का इरादा था। गाय ठीक तरह से बियायेगी तभी सब कुछ ठीक होने वाला था।

उसका मन हो रहा था कि नौकरी के लिए माथेरान गया हुआ बेटा यहां अपने पास होना चाहिए। शिवा उम्र के पचास साल पार कर चुका था और तनाव पैदा करनेवाली ऐसी घटनाएं बर्दाश्त करना उसके लिए मुश्किल हो रहा था। अगर अपना जवान अर्जुन (अर्ज्या) यहां होता तो उसे बरसात का, घर चूने का, गाय के बियाने का यह तनाव महसूस नहीं होता। वह यह जानता था कि ऐसी बारिश में पहाड़ से उतरना बड़ी मुसीबत थी। लेकिन अंदर से उसे यह भी लगता था कि लड़का मुसीबत उठाकर पहाड़ उतर कर आये।

उसकी औरत टपकनेवाला पानी पोंछते-पोंछते बीच ही में कमर पकड़ कर सीधी खड़ी हो जाती। गरीबी से जूझते-जूझते वह उमर से पहले ही बूढ़ी दिखने लगी थी। उसके बाल झर गये थे। बदन दुबला हो गया था। घर-गृहस्थी का हर काम मुश्किल लग रहा था। और जब काम नहीं होता था तो आमदनी भी नहीं होती थी जिससे दुख ज्यादा ही होता था। कितनी बार जो बात मन में आयी थी आज फिर से आयी। बचपन में सुनी एक कहानी वह अपने ही मन में संजोने लगी, 'शिवजी और पार्वतीजी विमान में बैठे जा रहे हैं। पार्वतीजी का ध्यान इस घर की ओर गया। यहां के लोगों की गरीबी और मुसीबतें देखकर उन्हें करुणा आयी। उन्होंने शिवजी को विमान नीचे उतारने के लिए मजबूर किया। झोंपड़ी में आकर उन्होंने मुझे

एक मणि दे दी। उसे घिसते ही मनचाही चीज मिलने लगी।'

हमेशा की तरह वह कल्पना में मगन हो गयी। पार्वतीजी को उसने नमस्कार किया है, उनसे बात की है। फिर अपने पति के घर आने पर पार्वतीजी की दी हुई मणि का चमत्कार उसे दिखाया। उसका चेहरा खिल गया। पति की खुशी देखकर उसकी आंखों में पानी भर आया। फिर यह समझ कर कि मणि मानो हाथ में ही हो, उसने इच्छा प्रकट की कि अर्जुन को एक खूबसूरत सेहतमंद बीबी मिलनी चाहिए। फिर बहू के आगमन की खुशी में वह डूब गयी।

सब राह देख रहे थे कि कब संतू वाणी पोथी पढ़ना शुरू करेंगे। गर्दन झुकाकर खांसते हुए वह बोला,

"मित्रो, ध्यान दो!"

सबने गर्दन हिलायी। केवल रामजी की नजर हिली नहीं। संतू ने शुरुआत की –

"ज्ञानेश्वरजी ने ज्ञानेश्वरी सुनाकर सारी दुनिया पर अहसान किया है। कृष्ण ने अर्जुन को मोह से मुक्त किया तो ज्ञानेश्वरजी ने हमें मुक्त किया। अब हम अमृतानुभव का आस्वाद लेंगे। 'ज्ञान-अज्ञान भेद कथन' अध्याय मैं पढ़ता हूं। क्यों जोशीजी?"

जोशीजी ने गर्दन हिलायी। एक नजर रामजी पर डालकर वह पोथी देखने लगा। प्रवचन शुरू हुआ।

बस इतना ही हो रहा था कि रामजी के कानों तक शब्दों की ध्वनि आ रही थी। पर उसका मन तो भटक रहा था। उसके बेटे की देह अभी तक नहीं मिली थी। वह देह उसे दिख रही थी। लाल सुर्ख बनी हाल को संड़सी से पकड़ कर जब वह निहाई पर रखता तो उसका बेटा कैसे धमाधम आघात करता! अभी से उसकी बांहें

गठीली होने लगी थीं। हथौड़े से प्रहार करते समय उसकी बांहों की स्नायु मरोड़ लेती थीं। लड़का इस तरह जब सामने काम करता तो उसे लगता कि उसका बेटा नहीं बल्कि वही अपने बाप के सामने काम कर रहा हो। जो भी कुछ अपना था वह सब हमने अपने बेटे में उंडेल दिया है, इस बात का आनंद किसी समाधि के आनंद का-सा था। मानो बेटे के रूप में वह स्वयं आगे जी रहा है, यह भाव एक प्रकार के अक्षय होने का अहसास उसे करा देता। बेटे के मरने पर यह अहसास चला गया। उसे लगा कि वह भी उस राक्षस की तरह ही निष्प्राण हो गया है जिसकी जान तोते में थी और तोते के मरने पर वह तड़प-तड़प कर मर जाता है।

संतू वाणी पढ़ रहा था –

आता अज्ञानाचेनि मारे।
ज्ञान अभेदे वावरे॥
नीद साधोनी जागरे।
नांदिजे जेवी॥

अर्थ: अब अज्ञान नष्ट होकर ज्ञान अपने मूल अभेद रूप में विचरने लगता है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार नींद को नष्ट कर जागृति अवस्था अपने अभेद रूप में विचरने लगती है। (नींद में, सपने में विद्यमान ज्ञेय, ज्ञाता और ज्ञान, यह भेद जगने पर नष्ट होता है और पुरुष अभेद रूप में विचरने लगता है।)

पंक्ति पढ़ने के बाद उसने सबकी ओर देखा। फिर 'ओवी' (एक छंद) के सुर में उसने जो पढ़ा था वही सरल गद्य में कहने लगा–

"ज्ञानेश्वरजी कहते हैं, आता अज्ञानाचेनि मारे, ज्ञान अभेदे वावरे, नीद साधोनी जागरे, नांदिजे जेवी..."

सभी ने गर्दन हिलायी। कुछ आसान अभंग या ओवियों को छोड़

दें, तो पढ़नेवाले की ही समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या पढ़ रहा है, मगर यहां तो सुननेवाले की समझ में कभी कुछ नहीं आता था। आज तक बीस सालों से इसी ढंग से ज्ञानेश्वरी, अमृतानुभव, चांगदेव पासष्टी ये ग्रंथ सैकड़ों बार पढ़े गये थे। इनमें से बहुत लोगों को ज्ञानेश्वरी जबानी याद थी। लेकिन उसका मतलब समझने की जरूरत किसी ने महसूस नहीं की। संस्कृत के मंत्रों को सुनते समय उनका अर्थ ध्यान में नहीं आता, लेकिन पढ़े-लिखे हम भी जिस भाव से उन्हें सुनते हैं वही भाव वहां था। संतू वाणी ने पहली ओवी गद्य में बोलने के बाद पूछा,

"समझ में आया?"

सभी ने फिर गर्दन हिलायी। वह आगे पढ़ने लगा-

का दर्पणाचा निघाला।
ऐक्य बोधु पाहिला॥
मुख भोगी आपला।
आपणची॥

अर्थ: आईने में अपना मुख देखने से पहले ज्ञान का संस्कार यह रहता ही है कि अपना मुख एक ही है। परंतु यह संस्कार लुप्त रहता है। आईने में मुख देखने पर वह लुप्त संस्कार पुन: प्रकट होता है। फिर देखनेवाला आईने से दूर हटने पर उन बिंब-प्रतिबिंब की अनुपस्थिति में एकमुख होने का अनुभव भोगता रहता है।

और इस ओवी को भी उसने इस ढंग से गद्य में पढ़ा जैसे कि वह उसका संपूर्ण अर्थ खोल करके बता रहा हो।

रामजी के कानों में ओवी के सुर आ रहे थे। और वह देख रहा था बाढ़ में बहता अपने बेटे का शरीर। सारी दुनिया कितनी असली-असली लगने लगती है और यकायक सब कुछ झूठ बन जाता है!

बाढ़ के लाल रेले के साथ ऊपर-नीचे बहती उसकी देह में कुछ भी बचा नहीं होगा। वह तो केवल पंच महाभूतों का एक भाग था। वह रामजी का बेटा नहीं था। खेलनेवाला, झगड़नेवाला, हंसनेवाला, 'बाबा' कहकर पुकारनेवाला। अब कहीं किनारे पर, नदी के पानी में उतर आयी टहनी से वह देह अटक गयी होगी। केवल प्राणों के निकल जाने पर ही आदमी इस प्रकार बेसहारा बन जाता है! इस तरह किसी टहनी में फंसकर लाल पानी की मार खाता रहता है!

रामजी इस तरह सोच रहा था और अन्य लोग भी बेचैन हो गये

थे। इसलिए आज पढ़ने में रंग नहीं भर रहा था। किन्हीं भी शब्दों से, भले ही फिर वे अमृतानुभव के क्यों न हो , मनुष्य को संतोष नहीं मिलता, ऐसे अवसर पर तो बिलकुल ही नहीं। सभी को यही अहसास हो रहा था। मगन होने का भाव दिखाकर, गंभीरता से पढ़कर हर कोई इतना ही दिखाने की कोशिश कर रहा था कि यहां तसल्ली मिल रही है। दो सौ-तीन सौ बरस पहले कोई पोथी लिखता है, अभंग लिखता है और उस पोथी या अभंग को हम अपनी जिंदगी का सब कुछ मान बैठते हैं। उसके पहले तो वह पोथी नहीं थी, अभंग नहीं थे। फिर तब लोग क्या करते थे? क्या ऐसी ही उसके पहले की पोथी निकाल कर पढ़ते थे और तसल्ली पाने की कोशिश करते थे?

ऐसा ही कुछ इन तीनों कंठीधारियों के मन में आता जा रहा था। जैसे-जैसे एक-एक ओवी आगे पढ़ी जा रही थी वैसे-वैसे उसके द्वारा दुख मिटाने की कोशिश व्यर्थ लग रही थी। किसी भी तरह का रस उस पाठ से पैदा नहीं हो रहा था। शांत रस पैदा करने के लिए जिस तरह की मन की अवस्था बनाना जरूरी था वह बनाने में कोई सफल नहीं हो रहा था।

और ओवी खत्म होते ही संतू वाणी सुननेवालों की ओर देखता था। सुननेवाले गर्दन हिला रहे थे और वह आगे की ओवी पढ़ता जाता था।

शिवा नेमाणे की गाय अब बीच में जोर-जोर से रंभाने लगी थी। शिवा और उसकी औरत टटिया के आसपास बार-बार चक्कर लगाने लगे। पौन घंटा पहले ही गाय की आंवल फूट गयी थी और उसकी पीड़ा बढ़ने लगी थी। गाय का उठना-बैठना बढ़ गया था।

इस अहसास से कि हम कुछ नहीं कर सकते, पति-पत्नी विवश होकर दूर से ही उसकी ओर देख रहे थे। एक जीव के पैदा होते समय इतनी यातनाएं होती हैं! एक अंकुर फूटता है, एक फूल खिलता है एक फल लगता है। प्रकृति में सब तरफ यह जनन चलता रहता है और निरंतर यातनाएं जारी रहती हैं। इन यातनाओं का हूबहू एक छोटा-सा रूप उस जोड़े के चेहरे पर दिख रहा था।

यकायक गाय लड़खड़ाती हुई उठकर खड़ी हो गयी। फैले हुए पैरों को पास खींचकर करुणा से रंभायी। इसी अवस्था में बछड़े के पैर का एक खुर बाहर आ गया।

शिवा ने औरत की बांह कसकर पकड़ ली। दोनों सावधान होकर खंभे को हाथ से कसकर पकड़ कर देखते रहे। उनकी सांसें रुक गयी थीं। आंखें तन गयी थीं।

उन्हें लगा था कि बछड़े का एक पांव बाहर आ गया तो दूसरा भी आ जायेगा। लेकिन पांव अंदर गया और लगा अब सिर दिख रहा है। सिर की तरफ से दुनिया में छलांग लगाने की थोड़ी-सी हरकत बछड़े ने की भी। लेकिन वह फिर से अंदर खिसक गया।

गाय की छटपटाहट बढ़ने लगी। पीड़ा न सह पाने के कारण वह पैरों से इधर-उधर उछलने लगी। उसका मुंह अधिक ऊपर आने लगा और वह अधिक करुण स्वर में रंभाने लगी। शिवा की औरत एकदम समझ गयी कि गाय को बियाने में मुसीबत पैदा हो गयी है।

बड़े विचित्र स्वर में उसने रोना शुरू किया। शिवा भी स्थिर होकर गाय की ओर टकटकी लगाकर देख रहा था। उसके शरीर के सारे अंग सुन्न हो गये थे। मन भी सुन्न हुआ जा रहा था। पत्नी ने उसकी बांह पकड़ कर चिल्लाते हुए उसे हिलाया। फिर भी उसकी स्थिर हो आयी नजर हिली नहीं। पति की बांह छोड़कर वह दौड़ती हुई घर से बाहर रास्ते पर आ गयी और चिल्लाने लगी, ''रामजी दा!

रामजी दा! दौड़कर आओ रे बप्पा! बियाने में मेरी गाय को तकलीफ हो रही है रे... आओ जी आओ!"

रामजी की आंखों के सामने दिख रही बेटे की देह ओझल हो गयी थी। सामने चल रहा पाठ उसे सुनायी देने लगा था। यकायक उसे विट्ठल पर गुस्सा आने लगा। मेरी करुणाभरी पुकार उसके कानों तक नहीं पहुंची तो ये बेजान शब्द कैसे पहुंचेंगे? ये लोग बिना वजह क्यों यह सब पढ़ रहे हैं? पचीस बरसों में हजारों बार यह सब पढ़ा जा चुका है। इसमें से क्या हाथ आया? यह सब सुनकर विट्ठल ने क्या कुछ किया? मेरा बेटा चल बसा। जिंदगी भर ये ऐसे ही पढ़ते रहेंगे। वही शब्द– वही ग्रंथ। और मरते वक्त 'विट्ठल विट्ठल' कहेंगे। मेरे बेटे को तो वह इतना अचानक ले गया कि 'विट्ठल' कहने के लिए उसे वक्त ही नहीं मिला। क्या उसे मुक्ति नहीं मिलेगी? फिर कितने ही लोग ऐसे अचानक चल बसते हैं। उनका क्या होता होगा? विट्ठल! इन सब सवालों के जवाब मुझे दो! मैं तुमसे पूछ रहा हूं! मैं, रामजी, जो पचीस सालों से कंठीधारी बना हुआ है!

संतू वाणी ने छठी पंक्ति पढ़ी। वह उसका मतलब समझाते-समझाते यही सोच रहा था कि यह फीका प्रवचन कैसे और कहां खत्म करुं। इतने में शिवा नेमाणे की औरत की रोती–बिसूरती आवाज सुनायी पड़ी-

"रामजी दा! रामजी दा...!"

जोशी ने रामजी की ओर देखकर धीरे से गोविंदा से कहा,

"लगता है शिवा की गाय को बियाने में तकलीफ हो रही है।"

उसका वाक्य खत्म भी न हुआ कि नीचे के दरवाजे पर मुट्ठी और सिर पटकने की आवाज सुनायी दी। तीनों कंठीधारी रामजी की ओर देखने लगे। शिवा की औरत की रोती आवाज फिर आयी–

"रामजी दा, आ जाओ भाई! मेरी गाय मुसीबत में फंस गयी है! दौड़ के आ जा, रामजी दा!"

रामजी के सुन्न मन में कुछ हिलने लगा। "दौड़ के आ जा" यह चीख मैंने कहां सुनी? रामजी को लगा, बाढ़ के जोर से बहने वाले पानी से, सांय-सांय करती हवा से वह आयी थी। 'मैं तो घर पर ही था। ना, वह चीख मुझे तो सुनायी ही नहीं पड़ी। मैं रेती से हंसिया घिस रहा था। यह तो वह चीख नहीं। वह तो नेमाणे की औरत चीख रही है। उसकी गाय को बियाने में तकलीफ हो रही है। उसकी गाय को तकलीफ हो रही है कि मेरा बेटा चीख रहा है?'

"दौड़ के आ जा..."

"उठो, उठो!" उसने खुद से कहा। उसका शरीर खड़ा हुआ। दर्द से सिकुड़ा उसका बदन जरा लुढ़क गया। रामजी चिल्लाया,

"चलो, चलो!"

उसने शर्ट की बहियां ऊपर खींची, सीढ़ी की ओर जल्दी से दो कदम बढ़ाये और धड़ाधड़ उतर कर वह दरवाजे की ओर दौड़ा। दरवाजा खोलकर बाहर आकर उसने नेमाणे की औरत से कहा,

"भागो! दवाओं की मेरी संदूक लेकर आओ।"

आंखें पोंछती हुई वह दौड़ पड़ी।

दौड़ा-दौड़ा चला आया रामजी टटिया के पास आकर रुक गया। नजर डालकर उसने अंदर की स्थिति देखी। फिर उसने नेमाणे से कहा,

"क्यों बे नेमाणे! गाय को खुले में ही रखा! कंबल डालने की भी समझ तुम्हें नहीं? इसलिए तो गाय को बियाने में मुसीबत आयी। तुम दोनों केवल झांकते रहे ना? तुम्हारी खोपड़ी में क्या भूसा भरा है?"

झट से उसने कमीज उतार कर नेमाणे की ओर फेंकी। फिर धोती ऊपर खींच ली। एकदम धीमे कदमों से वह गोठ में पैठ गया। फिर नेमाणे के पास वापस आकर बोला,

"अबे गधे! क्या तुम्हें यह भी बताना पड़ेगा कि गाय के शरीर के नीचे पुआल फैलाना चाहिए? तुम्हारे घर से जंगल में बियाना गाय को ज्यादा ठीक लगता।"

नेमाणे पुआल लाने के लिए दौड़ पड़ा। रामजी ने धीरे से आगे बढ़कर देखा। सिर की तरफ से बाहर आने की कोशिश बछड़ा दुबारा कर रहा था। एक-दो बार रंभाकर गाय ने अपनी पीड़ा जतायी। अपनी हथेलियों को उसके पेट के दोनों ओर थोड़ा-सा दबाकर उसने धीरे-धीरे फिराना शुरू कर दिया। ऐसा करते-करते उसने नेमाणे से कहा,

"बाल्टी में पानी लाओ!"

नेमाणे दौड़ता हुआ बाल्टी भर लाया। बाल्टी में हाथ डालते ही रामजी चिल्लाया,

"अरे मूर्ख! गर्म पानी लाओ।"

रामजी की हर गाली शिवा नेमाणे प्यार से सुन रहा था और रामजी के कहे अनुसार दौड़धूप कर रहा था। रामजी गालियां दे रहा था, डांट-डपट रहा था। शिवा को विश्वास हो गया कि अब रामजी गाय को छुटकारा देने के लिए जी-जान से कोशिश करेगा। रामजी ने एकाध थप्पड़ भी मारा होता तो वह आराम से सह लेता।

नेमाणे की औरत संदूक ले आयी। आते समय उसने देखा था कि शिवा चूल्हे के पास कुछ कर रहा था। संदूक रामजी के सामने रखकर वह चूल्हे की तरफ भागी।

बरसात हो रही है, इसका अहसास तक अब उन्हें नहीं हो रहा था। टटिया के पास जाते वक्त ओलती से गिरता पानी बदन पर पड़

रहा था तो भी उन्हें कुछ नहीं लग रहा था। नेमाणे पति-पत्नी को लग रहा था कि सारा आसमान नीला और साफ हो गया है।

रामजी ने संदूक से पोटैशियम की बोतल निकाली और झट से चार बूंदें पानी में डाल दीं। दोनों हाथ डालकर उसे पानी में घुलाया। फिर एक-दो बार नाखून से अपने ही नाखून उसने साफ किये और मुलायम बनाये।

उठकर वह गाय के पास आया और फिर से उसके पेट के दोनों ओर हाथ फिराने लगा। उसका हाथ फेरना शुरू होते ही गाय ने मुड़कर उसकी ओर देखा। उसने ऐसे कहा जैसे किसी आदमी से बातें कर रहा हो,

''धीरज रखो, मेरी बिटिया।''

उमर अधिक होने के कारण रामजी की गठीली बांहें थोड़ी ढ़ीली हो गयी थीं। हाथ फिराते समय स्नायु के साथ ढ़ीली पड़ी चमड़ी भी हिल रही थी। कुछ देर तक हाथ फिराने के बाद उसे दोनों कंधों में थोड़ा दर्द महसूस होने लगा। उठकर उसने तेल ले लिया और दोनों हाथों पर उंडेल दिया। जहां बछड़े का सिर दिखायी दे रहा था वहां उसने दोनों हाथों से उसे लगाया। उसके बाद फिर से वह उसके पेट के दोनों ओर हाथ फिराने लगा।

गाय के बार-बार रंभाने से और बेचैनी से पता चलता था कि पीड़ा का जोर बढ़ गया था। रामजी ने फिर से बाल्टी में हाथ डुबोये। फिर से हाथ पर तेल लिया और मुहाने पर आये बछड़े का सिर चारों ओर से हाथों से पकड़ कर वह उसका स्थान बदलने लगा।

अब बाहर हो रही बरसात की ठंडक का अहसास उसे नहीं हो रहा था। उसका बदन अंदर से गर्म होने लगा था। उसे किसी बात का होश नहीं था। सारी दुनिया उसे गाय में, बछड़े में दिख रही थी।

एक जीव यहां अटक गया था। उसे बाहर की दुनिया में आना था, उछलकूद करनी थी और उसे किसी ने अटका कर रखा था।

बछड़े का सिर अंदर धकेल कर वह उसका छोटा-सा शरीर घुमाने लगा। अंदर गयी उसकी उंगलियां मानो अज्ञेय को ढूंढ़ रही थीं, मनुष्य के ज्ञान के परे वाली घटना का अनुभव ले रही थीं। और उन घटनाओं को अपनी इच्छा के अनुसार आकार देना चाहती थीं। उसकी सारी शक्ति, सारी कुशलता उंगलियों में समा गयी थी। ज्ञानेश्वरजी ने कहा होता – अब उंगलियां आंखें बन गयी हैं, उंगलियां दिमाग बन गयी हैं, उंगलियां जीव से झगड़ रही हैं। घुटनों के बल आधे झुके होने से जांघ में दर्द हो रहा है। कमर का ये हाल कि अब टूटी कि तब। घुटनों के बल बैठकर वह बछड़े के आगे के खुर हाथ में आने की राह देख रहा था। पीड़ा का जोर बढ़ते ही गाय के थरथराने वाले शरीर का अहसास उसकी उंगलियों को हो रहा था। उसकी उंगलियां छटपटा रही थीं और बदन झनझना रहा था। अधिक पीड़ा होने के कारण गाय ने जोर लगाया ही था कि वह भी अपना हाथ और अंदर ले जाकर कहने लगा,

"धीरज से, धीरज से, शाब्बास...!"

गाय से मानो वह कहना चाहता था कि इस जीव को बचाने के संघर्ष में मैं और तुम दोनों समान रूप से उलझे हुए हैं। कंधे से कंधा मिलाकर यातनाओं की लड़ाई दोनों को लड़नी है। अब यह लड़ाई हारनी नहीं है। रिहाई करते-करते एकतरफा जानवर से बात करने की उसकी आदत थी। अभी भी वह धीरे-धीरे गाय से कह रहा था,

"धीरज रखो! प्यारा बछड़ा है अभी वह। छलांग लगायेगा। फिर तुम्हारे चाटते-चाटते वह बढ़ेगा। बड़ा हो जायेगा – जरा जोर लगाओ...!"

महापीड़ा खत्म हो गयी और गाय फिर से चुप हो गयी। उसका

शरीर अब पसीने से तरबतर होने लगा। रामजी ने उसके पेट के दोनों ओर हाथ फिराना शुरू किया। उसके चिकने हाथ फिसलने लगे। उसने अपनी धोती का आगे का छोर खोलकर उससे हाथ पोंछे। फिर पेट की दोनों बाजुएं पोंछी और हाथ फिराते-फिराते फिर से पीड़ा का जोर बढ़ने की राह वह देखने लगा।

जिस प्रकार कोई क्रूर जानवर रुक-रुक कर हमला करता है उसी प्रकार वह पीड़ा कर रही थी। गाय के सारे शरीर को थरथराने वाली पीड़ा का जोर बढ़ते ही रामजी ने झट से बाल्टी में हाथ डुबोये, फिर से तेल लिया और अंदर हाथ डालकर बछड़े का शरीर घुमाने लगा।

इस दौड़धूप में सब कुछ थम गया था। बारिश की आवाज भी थम गयी थी। लगता था कि देव-गंधर्व अपने चक्कर काटते विमान को रोककर एकटक देख रहे थे। मानो पृथ्वी पर शुभ-अशुभ का झगड़ा जारी था। मनुष्य को जीव चाहिए था और किसे नहीं चाहिए था?

रामजी को सिर्फ वह जीव दिखायी दे रहा था। अंदर से उसे तीव्र इच्छा हो रही थी कि इस जीव को बचाना चाहिए। अपने लिए, दुनिया के लिए। कहीं एक कड़ी टूट गयी थी। उसे जोड़ा जाना जरूरी था। भले ही कोई भी आड़े आ जाये। किसी की इच्छा हो, न हो।

अंदर के जीव की बाहर आने के लिए चल रही छटपटाहट रामजी समझ रहा था। उस जीव की वह बेबसी! ऐसे जीव के संदर्भ में ज्ञानेश्वरजी ने क्या कहा होता? उन्होंने कहा होता-विश्व-उत्पत्ति की अनुभूति हो गयी। जानवरों की रिहाई करते समय रामजी को खुद भी अचरज होता था। यह जीव यहां कैसे आता है? कैसे बनता है वह? यह सबसे बड़ा चमत्कार है। सभी तत्त्वों का सार यही है। कभी उसे लगता, बछड़े में आनेवाला जीव या उसमें से बाहर जाने वाला जीव कभी कहीं जरूर हाथ आयेगा, कभी न कभी तो साक्षात्कार

करा ही देगा।

जोर की वह पीड़ा गाय सह नहीं पायी और उसने आगे का एक पांव मोड़ लिया। फिर दूसरा भी मोड़कर थोड़ी-सी जमीन पर टेककर, गर्दन हिलाती, बेबस होकर वह बैठ गयी। अब शरीर का बोझ सहा न जाने से पीछे के पैर भी मोड़कर वह गिर जायेगी, यह जानकर रामजी चिल्लाया,

"ऐ मूर्ख! दौड़ो, उठाओ वहां से। इसे खड़ा करना होगा।" दोनों ने गाय को खड़ा करने की कोशिश शुरू की। नेमाणे की सांस फूल गयी, लेकिन आदत होने के बावजूद रामजी भी पसीने से तरबतर हो गया। गाय को खड़ा करके सिर का पसीना पोंछते हुए वह फिर से उसके पीछे आ गया।

गाय हांफने लगी थी। आनेवाली नयी जोरदार पीड़ा के लिए वह तैयारी कर रही थी। रामजी इस तरह थरथराने लगा मानो गाय की पीड़ा उसके शरीर में घुस रही हो। उसका सारा शरीर सचेत हो गया। गाय को उसने एक-दो बार थपथपाया, सहलाया। हाथ पानी में डुबोये, तेल लिया और फिर से बछड़े का शरीर घुमाने लगा।

रामजी अब तैश में आ गया था। मानो अज्ञेय से वह सीधे संघर्ष कर रहा था। ऐसा लगता था, किसी तरह का बदला लेनेवाला था। कुछ साबित करनेवाला था। खोया हुआ कुछ हासिल करनेवाला था। गाय के पेट के अंदर की हलचल से वह पूरी तरह से एक हो गया था। पीड़ा जल्दी-जल्दी बढ़ने लगी थी। बछड़ा बाहर फेंकने के लिए गाय छटपटा रही थी। उसकी कोशिशों की हार को अपनी उंगलियों से वह जानने लगा था और उसकी उंगलियां भी अपने आप उसका साथ देने लगीं। बछड़ा घूमने लगा। सिर अंदर गया भी – अब पेट का स्पर्श उंगलियों को हुआ। वह और घूमा और तुरंत उसके आगे के दो खुर रामजी की उंगलियों में आ गये।

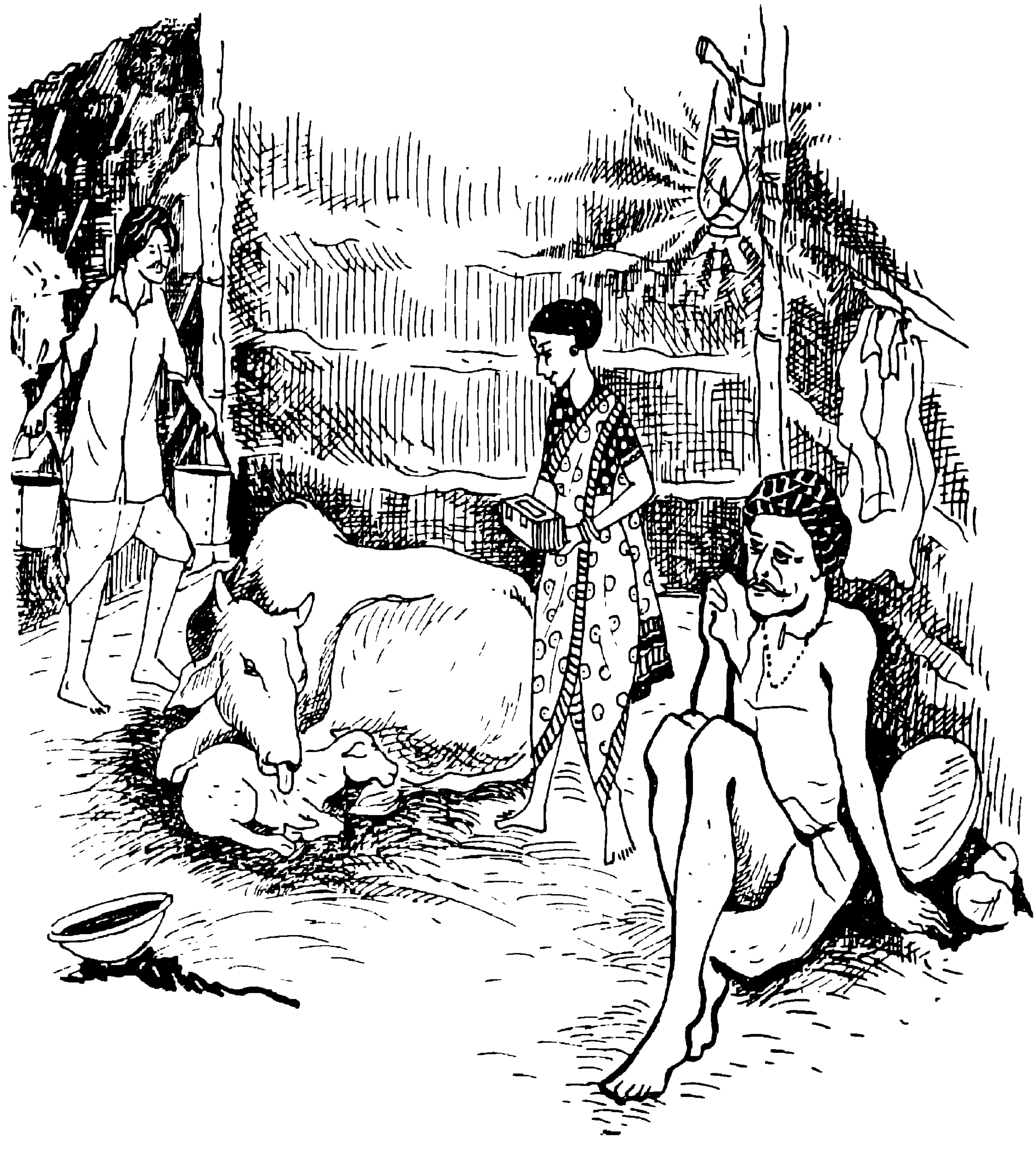

वह धीरे-धीरे उन्हें खींचने लगा। बछड़ा बाहर आने लगा। रामजी सिर से गर्दन तक पसीने से तरबतर हो गया। गाय के पूरे बदन पर पसीने की बूंदें दीखने लगीं। रामजी हांफने लगा।

और यकायक बिना समझे बछड़ा उसके हाथों में आ गया। बाहर आते ही उसकी हड़बड़ी शुरू हो गयी। लग रहा था कि दुनिया में आने के लिए वह बड़ा उतावला हो गया था। बछड़े के ऊपर की झिल्ली रामजी ने निकाला ही था कि उसने झट से छलांग लगायी। उसकी छलांग को रामजी ने उसकी मां की ओर मोड़ दिया।

गाय की हड़बड़ी जारी ही थी। वह कभी अपने पीछेवाले पैर इधर-उधर हिलाती तो कभी पूंछ हिलाती थी। उसकी जबान बछड़े की राह देख रही थी। उसकी जबान को बछड़े का स्पर्श होते ही उसने चाटना शुरू किया।

रामजी ने धोती का छोर खोलकर मुंह, गर्दन, हाथ पोंछ लिये और फिर आगे क्या-क्या करना है, जल्दी-जल्दी बताने लगा। जैसे, गाय को क्या खिलाना चाहिए? नाल कैसे काटनी है? बछड़े को दूध कब पिलाना है? गाय को गर्म पानी पिलाना और साफ कैसे रखना है? उसके खाने में गेहूं का भूसा या सौंठ-काली मिर्च कितनी डालनी है?

बात करते-करते नांद पर रखी अपनी कमीज उसने पहन ली। फिर संदूक उठाकर वह चल पड़ा।

बाहर बारिश में आते ही फिर से वह होश में आ गया और अपना खोया हुआ बच्चा उसे याद आने लगा। इसी हालत में वह चलता रहा, चलता रहा। कदम फिर से सुन्न होने लगे। चेहरा कठोर बन गया। संतू वाणी की दुकान के सामने आते ही वह उस तरफ मुड़ गया।

बरामदे में तीनों कंठीधारी उसी की राह देख रहे थे। उसके आते ही वे उठ खड़े हुए। जोशी ने कहा,

''पोथी का पठन पूरा कर देते हैं।''

चारों कोठी पर आ गये और अपनी-अपनी जगह पर बैठ गये। संतू ने अमृतानुभव आगे रखा, झट से खोला और पढ़ने लगा-

आता आमोद सुनासि आले।
श्रुतिशी श्रवण निघाले।
आरसे उठले। लोचनेशी॥

आपलेनि समीरपणे।
वेल्हावती विंजणे।
किं माथेंचि चाफेपणे। बहकताती॥

अर्थ: अब सुगंध नाक बनकर अपना ही भोग ले रही है और शब्द कान बनकर अपना भोग ले रहे हैं। उसी प्रकार, आईना ही आंख बनकर अपने ही में अपने को देखकर सुख का अनुभव कर रहा है। वायु पंखा बनकर झलने लगी है, सिर मानो स्वयं चंपक बनकर गमकने लगा है।

अभी भी उनमें से कोई भी इन पंक्तियों का अर्थ समझ नहीं सका था लेकिन पठन के स्वर और शब्दों के नाद में चारों ही निमग्न होने लगे। अब उन स्वरों और नादों में से अर्थ ध्यान में आने लगा। सभी की गर्दन हिलने लगीं। रामजी का चेहरा भावों से भर आया। तीसरी ओवी की शुरुआत होते न होते वह फूट-फूट कर रोने लगा। संतू वाणी का पठन जारी था-

जिव्हा लोधली रसे।
कमल सूर्यपणे विकासे॥
चकोरचि जैसे।
चंद्रमा झाले॥
फुलेंचि झालीं भ्रमर
तरुणीच झाली नर...

अर्थ: जिह्वा रस बनकर रसभीनी हो गयी। कमल सूर्य बनकर खिलने लगे। चकोर ही मानो चंद्रमा बन गये। फूल भ्रमर हो गये। युवती युवक बन गयी।

□